विक्रम संवाद

पाक्षिक आलेख सेवा/नि:शुल्क वितरण के लिए

सम्पादक
महाराजा विक्रमादित्य शोध पीठ
बिड़ला भवन, देवास रोड, उज्जैन-456010
फोन : 0734-2521499, 0755-2660407
Email : mvspujjain@gmail.com
vikramadityashodhpeeth@gmail.com
Web : www.mvspujjain.com

इस अंक में

पृष्ठ क्र. 3-4

लोकमान्य विक्रम सम्वत् ही राष्ट्रीय पंचांग हो
अजय बोकिल

पृष्ठ क्र. 5-6

विक्रमादित्य व तात्कालिक राजवंशों के मुद्रा साक्ष
विजय कुमार परिहार

पृष्ठ क्र. 7

उज्जैन का अलौकिक सिंहस्थ

केन्द्रीय संस्कृति मंत्री एवं मुख्यमंत्री ने किया 125 दिवसीय विक्रमोत्सव का शुभारंभ

विक्रमादित्य, उनके युग, भारत उत्कर्ष, नवजागरण और भारत विद्या पर एकाग्र विक्रमोत्सव 2025 शुभारंभ केन्द्रीय संस्कृति एवं पर्यटन मंत्री गजेन्द्र सिंह शेखावत एवं माननीय मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने किया। केंद्रीय मंत्री ने कहा कि सम्राट विक्रमादित्य सनातन के रक्षक थे। इसी के साथ मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने भारत सरकार से वैदिक सनातन परंपरा पर केन्द्रित विक्रमादित्य वैदिक घड़ी को संसद भवन में लगाये जाने का अनुरोध किया। इस अवसर पर सभी प्रमुख 51 महाशिवरात्रि मेलों का समारंभ, उज्जयिनी विक्रम व्यापार मेला, सिंहस्थ 2028 की अवधारणा का लोकार्पण किया गया। इसके पहले समारोह की विस्तृत रूपरेखा पर महाराजा विक्रमादित्य शोधपीठ के निदेशक श्रीराम तिवारी ने प्रकाश डाला।

शुभारंभ कार्यक्रम को संबोधित करते हुए केन्द्रीय संस्कृति एवं पर्यटन मंत्री गजेन्द्र सिंह शेखावत ने कहा कि भगवान महाकाल की पवित्र भूमि उज्जैन अनादि काल से आध्यात्म और सनातन संस्कृति का महत्वपूर्ण केन्द्र रही है। आज विक्रमोत्सव के इस अवसर पर यहाँ आकर मैं बहुत अभिभूत हूँ।

भारत में भगवान श्रीराम व युगावतार भगवान श्रीकृष्ण के बाद यदि कोई लोकमान्य नायक हुए है तो वे उज्जैन के सम्राट विक्रमादित्य ही थे। जिन्होंने सनातन धर्म की रक्षा की। सम्राट विक्रमादित्य को पहला स्वतंत्रता सेनानी कहना गलत न होगा। जिन्होंने दुर्दांत विदेशी आक्रांताओं को निर्णायक रूप से पराजित करने का पराक्रम किया था और उसके बाद विक्रम सम्वत् का प्रवर्तन किया। आज भी देश और दुनिया में सम्राट विक्रमादित्य के शौर्य, न्याय, पराक्रम, ज्ञान, विज्ञान, पुरातत्व, साहित्य, आध्यात्म आदि क्षेत्रों में किये गये महत्व पूर्ण कार्यों का स्मरण किया जाता है। इस महत्वपूर्ण अवसर पर मुझे यह जानकर भी प्रसन्न ता हुई कि मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने शासकीय कैलेण्डर में विक्रम

सम्वत् को अंगीकार किया है। ऐसा करने वाला मध्यप्रदेश भारत का पहला राज्य है। अन्य राज्यों को भी इससे प्रेरणा लेना चाहिए।

मैं यहाँ आपके प्रदेश के यशस्वी, ऊर्जावान व दूरदर्शी मुख्यमंत्री माननीय डॉ. मोहन यादव जी की सराहना करता हूँ कि उनके द्वारा विरासत के प्रति सम्मान स्वरूप 18 वर्ष पहले एक दिवसीय विक्रमोत्सव की शुरूआत ने आज विराट स्वरूप धारण कर लिया है। मैं इस बात की प्रशंसा करना चाहूँगा कि विक्रमोत्सव में न केवल सांस्कृतिक गतिविधियाँ शामिल है बल्कि मुझे यह जानकर अच्छा लगा कि यह एक लोक कल्याणकारी उत्सव की तरह आयोजित किया जा रहा है।

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा कि न्याय, वीरता, शौर्य और धर्म परायणता में विक्रमादित्य का कोई सानी नहीं रहा है हमेशा से हर शासक की इच्छा विक्रमादित्य की तरह बनने की रही है। उन्होंने कहा कि प्राचीन समय में उज्जैन व्यापार, व्यवसाय का एक प्रमुख केन्द्र रहा है। यहाँ दुनियाभर के व्यापारी आते थे तथा व्यापार, व्यावसाय से उनका संबंध था। वर्तमान में हमारा प्रयास है कि यहाँ व्यापार व नये उद्योगों को स्थापित किया जाये। विक्रमोत्सव का आयोजन इसी दिशा में कार्य का प्रयास है।

डॉ. यादव ने बताया कि भारत की वैदिक समय प्रणाली, जो 30 मुहूर्त के दिन–रात के विभाजन पर आधारित है, विश्व की सबसे उन्नत और वैज्ञानिक समय प्रणालियों में से एक थी। यह प्रणाली प्रकृति और खगोलीय गणनाओं के अनुरूप थी लेकिन, औपनिवेशिक प्रभाव और सांस्कृतिक वर्चस्व के कारण, कोई 141 वर्ष पहले, वर्ष 1884 में ग्रीनविच मीन टाइम (जीएमटी) को अंतरराष्ट्रीय मानक के रूप में भारत पर थोप दिया गया। यह ब्रिटिश उपनिवेशवाद का हिस्सा था, जिसके तहत भारतीय समय प्रणाली को महत्वहीन कर दिया गया। उन्होंने बताया कि उज्जैन प्राचीन काल से कालगणना का प्रमुख केंद्र रहा है। विगत वर्ष यहाँ विश्व की पहली वैदिक घड़ी स्थापित की गयी। यह वैदिक घड़ी भारतीय कालगणना की समृद्ध परंपरा को पुनर्जीवित करने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है। भारतीय कालगणना की इस परंपरा को व्यावहारिक बनाने विक्रमादित्य वैदिक घड़ी का एप भी तैयार किया जा चुका है। यह एप सभी भारतीय एवं विश्व की 180 से अधिक भाषाओं में देखा, समझा और पढ़ा जा सकेगा। भारत सरकार के मंत्री जी से मैं अनुरोध करना चाहता हूँ कि सनातन परंपरा पर केंद्रित इस घड़ी को संसद भवन में स्थापित किया जाए।

इस कार्यक्रम में जिम्बाब्वे के मंत्री राज मोदी भी उपस्थित थे। इस मौके पर उन्होंने कहा कि उज्जैन मैं पहली बार आया हूँ। यहाँ आकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। उन्होंने विक्रमोत्सव के सफलतापूर्वक सम्पन्न होने के लिए शुभकामनाएँ दी। शुभारंभ अवसर पर पद्मश्री आनंदन शिवमणि व हंसराज रघुवंशी के शिव आराधना से गुंजायमान हुआ विक्रमोत्सव। आनंदन शिवमणि भारत के प्रसिद्ध तालवाद्य कलाकार हैं, जो अपने अनोखे और ऊर्जावान ढोलक, तबला, ड्रम और अन्य परकशन इंस्ट्रूमेंट्स बजाने की शैली के लिए जाने जाते हैं। शिव भक्ति से जुड़ा संगीत उनकी कला का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। शिवमणि ने विशेष रूप से भक्ति संगीत में भगवान महादेव को लेकर बहुत संगीत रचनाएँ तैयार की है। जिसमें शिव तांडव प्रमुख हैं।

इसी के साथ हंसराज रघुवंशी एक प्रख्यात भारतीय भजन गायक, लेखक और संगीतकार हैं, जिन्हें विशेष रूप से भगवान शिव के भजनों के लिए जाना जाता है। 2019 में रिलीज हुए उनके भजन 'मेरा भोला है भंडारी' ने उन्हें व्यापक पहचान दिलाई और यह गीत बेहद लोकप्रिय हुआ। हंसराज रघुवंशी ने बॉलीवुड में भी अपनी पहचान बनायी है।

लोकमान्य विक्रम सम्वत् ही राष्ट्रीय पंचांग हो

अजय बोकिल, वरिष्ठ लेखक एवं पत्रकार

आजादी के बाद से ही यह बहस का विषय रहा है कि स्वतंत्र भारत का राष्ट्रीय पंचांग वो क्यों नहीं है, जो देश के अधिकांश हिस्से में लोकमान्य है। अर्थात् लोकमान्यता उस विक्रम सम्वत् की है, जिसे महाकाल की नगरी उज्जयिनी के प्रतापी हिंदू राजा विक्रमादित्य ने विदेशी आक्रांत शकों को हराने की स्मृति को शाश्वत करने के ई.पू. 57 में चलाया था। लेकिन भारत का आधिकारिक राष्ट्रीय पंचांग वो शक सम्वत् है, जो शक राजा रूद्रदमन ने 58 ईस्वी में भारतीयों पर विजय के उपलक्ष्य में चलाया जाता है। कहा जाता है कि शक सम्वत् के पक्ष में विद्वानों का पलडा सिर्फ इसलिए झुका, क्योंकि ऐतिहासिक प्रमाण शक सम्वत् के पक्ष में ज्यादा थे। संभव है कि सम्वतारंभ की तिथि के हिसाब से शक सम्वत् के पक्ष में ज्यादा प्रमाण हो, लेकिन इसी के साथ यह सवाल भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि प्रामाणिक होने के दावे के बाद भी शक सम्वत् जन पंचांग का हिस्सा क्यों नहीं बन पाया? आज भी हिंदुओं के सभी तीज त्यौहार, संस्कार व ज्योतिष गणनाएँ ज्यादातर विक्रम सम्वत् के हिसाब से ही होती हैं न कि शक सम्वत् के हिसाब से। इसका भावार्थ यही है कि आज भी लोक मान्यता विक्रम सम्वत् की ज्यादा है बजाय शक सम्वत् की। ऐसे में भारत सरकार को राष्ट्रीय पंचांग के रूप में विक्रम सम्वत् को स्वीकार करने की दिशा में ठोस अकादमिक प्रयास करने चाहिए ताकि इस सम्वत् के रूप में हिंदू संस्कृति के जयघोष के साथ–साथ सम्राट विक्रमादित्य की न्यायप्रियता के आग्रह की भी पुनर्प्रतिष्ठा हो। इसे और प्रामाणिक आधार देने के लिए नए ऐतिहासिक शोध और विद्वत चर्चा की मदद भी ली जा सकती है।

शोध पत्रिका 'अधिगम' में प्रकाशित प्राचीन इतिहास के विशेषज्ञ डॉ. शिवकांत त्रिपाठी के अनुसार विक्रम सम्वत् भारत के अनेक सम्वतों में सर्वाधिक जीवनी शक्ति के रूप में उपस्थित रहा और आज भी प्रयोग में है। समूचे उत्तर भारत में तो यह जन्म से लेकर अंत तक प्रयुक्त होता है। डॉ. प्रशांत पुराणिक के अनुसार चक्रवर्ती सम्राट विक्रमादित्य द्वारा प्रवर्तित विक्रम सम्वत् ही हमारा राष्ट्रीय सम्वत् है। इतिहासकारों का मानना है कि विक्रमादित्य ने शकों को हराकर भारत को विदेशी शासकों से मुक्ति दिलाई थी। इसकी शुरूआत 57 ईसा पूर्व हुई। यह सम्वत् चंद्रमा पर आधारित है। अतः चौत्र शुक्ल प्रतिपदा तिथि से प्रारंभ विक्रम सम्वत् को ही हिंदू नव वर्ष का प्रारंभ भी कहा जाता है। यह सम्वत् बंगाल को छोड़कर पूरे भारत में प्रचलित है। डॉ. पुराणिक के अनुसार आरम्भिक शिलालेखों में इसका उल्लेख कृत सम्वत् और मालव सम्वत् के रूप में भी हुआ है। मोटे तौर पर मान्यता यही है कि सम्राट विक्रमादित्य ने ईसा पूर्व 57 में इसका प्रचलन शुरू कराया था। कुछ लोग ईसवी सन् 78 और कुछ लोग ईसवी सन् 544 से भी इसका प्रारम्भ मानते हैं। फारसी ग्रंथ 'कलितौ दिमनः' में पंचतंत्र का एक पद्य 'शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनम्' का भाव उद्धृत है। कुछ विद्वान 'कृत सम्वत्' को 'विक्रम सम्वत्' का पूर्ववर्ती मानते हैं। अर्थात् विक्रम सम्वत् को पहले कृत सम्वत् के नाम से जाना जाता था। लेकिन 'कृत' शब्द के प्रयोग की सन्तोषजनक व्याख्या नहीं की जा सकी है। कुछ शिलालेखों में मालवगण का सम्वत् उल्लिखित है, जैसे–नरवर्मा का मंदसौर शिलालेख। इसमें 'कृत' एवं 'मालव' सम्वत् एक ही कहे गए हैं। हो सकता है कि कृत सम्वत् ही मालवा में मालव सम्वत् के नाम से जाना गया हो।

राजस्थान के बरनाला में मिले एक प्राचीन में 'विक्रम सम्वत्' का उल्लेख है। भविष्य पुराण के प्रतिसर्ग पर्व के अनुसार उज्जैन के परमार वंश के राजा गंधर्वसेन के दूसरे पुत्र का नाम विक्रमादित्य था, जिनका जन्म 102 ई.पू. में हुआ था तथा देहांत ईसवी सन् 15 में हुआ। विक्रम सम्वत् का एक महत्वपूर्ण उल्लेख गुजरात के काठियावाड़ के ओखामंडल के पूर्व राजा जयकदेव के शिलालेख में मिलता है। इस शिलालेख के स्थापना वर्ष में विक्रम सम्वत् 794 का उल्लेख है, जो ईस्वी सन् के हिसाब से वर्ष 737 होता है। भारत में मुस्लिम शासकों के सत्ता पर काबिज होने तक देश में मुख्य रूप से विक्रम और शक सम्वत् ही प्रचलन में थे। बौद्ध साहित्य में भी इसका उल्लेख मिलता है। नेपाल के पूर्व राणा राजवंश ने 1901 में विक्रम सम्वत् को ही नेपाल के अधिकृत हिंदू कैलेंडर के रूप में मान्य किया था।

वर्तमान में भारत में ग्रिगोरियन कैलेंडर (जोकि अंतरराष्ट्रीय रूप से मान्य है) के अलावा शक सम्वत् और विक्रम सम्वत्। इनमें से भारतीय पंचांग के रूप में केवल शक सम्वत् को ही मान्यता दी गई है। इसके पीछे तर्क यही है कि इसके प्रारंभ की तिथि और इतिहास ज्यादा प्रामाणिक है। राष्ट्रवादी इतिहासकारों का मानना है कि भारत सरकार को शक सम्वत् के बजाय केवल विक्रम सम्वत् को ही आधिकारिक रूप से मान्य करना चाहिए। वैसे हिंदू धर्म में कई पंचांग (कैलेंडर) प्रचलित हैं, लेकिन जो सर्वाधिक मान्य है, वह विक्रम और शक सम्वत् ही

हैं। वैसे भारत में विक्रमादित्य नाम से और भी सम्राट हुए हैं, क्योंकि विक्रमादित्य एक उपाधि थी। इतिहासकार राजबली पांडेय, कैलाशचंद जैन आदि ने विक्रमादित्य को उज्जैन स्थित मालवा का सम्राट माना है, जिसने सिन्ध से घुसकर मालवा पर हमला करने वाले शकों को रोका। इस पराक्रमी विक्रमादित्य (चंद्रगुप्त विक्रमादित्य नहीं) का उल्लेख कई पारंपरिक कथा साहित्य में मिलता है, जिसमें 'बेताल पच्चीसी' और 'सिंहासन बत्तीसी' अहम है। 12वीं सदी में कल्हण द्वारा लिखी गई 'राजतरंगिणी' में उल्लेख है कि उज्जैन के राजा हर्ष विक्रमादित्य ने शकों को पराजित किया था। इसी विक्रमादित्य ने अपने मित्र मातृगुप्त को उस समय कश्मीर का शासक नियुक्त किया था। विक्रम सम्वत् का प्रारंभ ईसा से 57 वर्ष पूर्व से माना जाता है। भारत के अलावा यह पंचांग नेपाल में भी मान्य है। बल्कि नेपाल का तो यह राष्ट्रीय पंचांग ही है। ऐसे में प्रश्न उठता है कि जब नेपाल में राष्ट्रीय पंचांग माना गया है तो भारत में इसे राष्ट्रीय पंचांग स्वीकार करने में कौन सी बाधा है? विक्रम सम्वत् का आरंभ गुजरात में कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से और उत्तर भारत में चौत्र शुक्ल प्रतिपदा से माना जाता है। माना जाता है कि वर्ष में 12 माह और 7 दिन का एक सप्ताह मान्य करने का प्रारंभ विक्रम सम्वत् से ही हुआ। महीने का हिसाब सूर्य व चंद्रमा की गति पर आधारिक है। ये बारह राशियाँ ही 12 सौर मास हैं। जिस दिन सूर्य जिस राशि में प्रवेश करता है उसी दिन संक्रान्ति होती है। पूर्णिमा के दिन, चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है, उसी आधार पर महीनों का नामकरण हुआ है। चंद्र वर्ष, सौर वर्ष से 11 दिन 3 घटी 48 पल छोटा है, इसीलिए प्रत्येक 3 वर्ष में इसमें 1 महीना जोड़ दिया जाता है। जिसे 'अधिक मास' कहते हैं। जिस दिन नव सम्वत् का आरम्भ होता है, उस दिन के वार के अनुसार वर्ष के राजा का निर्धारण होता है। उदाहरण के लिए 18 मार्च को विक्रम सम्वत् 2074 का प्रथम दिन था।

शुभोमय दास के अनुसार भारत में आजादी के बाद तक 30 अलग–अलग हिंदू पंचांग प्रचलन में थे। ये सभी ज्योतिषीय गणनाओं और स्थानीय कालनिर्णायकों के हिसाब से बनाए जाते थे। ये कैलेंडर हिंदुओं के अलावा बौद्धों, जैनों और सिखों में भी मान्य थे। जबकि सरकारी कामकाज ग्रिगोरियन कैलेंडर के हिसाब से होता था। 1957 में भारत सरकार ने एक 'पंचाग सुधार समिति' गठित की। जिसने चांद्रसूर्य पंचांग, जिसमें हर चौथे वर्ष अधिक मास जोड़ा जाता है, को आधिकारिक रूप से मान्य किया गया। समिति की सिफारिशें मानते हुए शक सम्वत् चौत्र प्रतिपदा 1879 अर्थात् 22 मार्च 1879 से इसका प्रारंभ माना गया। इसे ही भारत का राष्ट्रीय पंचांग भी स्वीकृत किया गया। वर्तमान शक सम्वत् 1945 चल रहा है। लेकिन विक्रम सम्वत् का भावनात्मक महत्व है। यह हमें अपने राष्ट्रीय गौरव और हिंदू संस्कृति की महानता का बोध भी कराता है। ऐसी संस्कृति जो न केवल कालगणना में विश्व में सबसे प्राचीन रही है, बल्कि काल निर्धारण के साथ राष्ट्रीय चेतना और न्यायप्रियता का आग्रह भी लिए हुए है।

विक्रमादित्य वैदिक घड़ी एप तैयार, 30 मार्च को लोकार्पण

माननीय मुख्यमंत्री ने विक्रमोत्सव 2025 के शुभारंभ अवसर पर कहा कि विक्रमादित्य वैदिक घड़ी भारतीय कालगणना पर आधारित विश्व, की पहली घड़ी है। भारतीय कालगणना सर्वाधिक विश्वसनीयपद्धति का पुनरस्थापन विक्रमादित्य वैदिक घड़ी के रूप में उज्जैन में किया गया है। विक्रमादित्य वैदिक घड़ी का लोकार्पण माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा 29 फरवरी 2024 को किया गया था। भारतीय कालगणना की इस परंपरा को व्यवहारिक बनाने विक्रमादित्य वैदिक घड़ी का एप भी तैयार किया जा चुका है। जिसका लोकार्पण गुड़ी पड़वा 30 मार्च को किया जायेगा। यह एप जीपीएस द्वारा संचालित है। जिससे यह किसी भी स्थान पर सूर्योदय के समय को सटीकता से जान पाता है और उसके अनुसार वैदिक समय की गणना करता है। यह एप 180 से अधिक भारतीय एवं वैश्विक भाषाओं में देखा जा सकता है। इस घड़ी में वैदिक कालगणना के समस्त घटकों को समवेत किया गया है। यह घड़ी सूर्योदय से परिचालित है। अतः जिस स्थान पर जो सूर्योदय का समय होगा उस स्थान की कालगणना तदनुसार होगी। स्टेंडर्ड टाइम भी उसी से जुड़ा रहेगा। इस एप के माध्यम से वैदिक समय, लोकेशन, भारतीय स्टेंडर्ड टाइम, ग्रीन विच मीन टाइम, तापमान, वायु गति, आर्द्रता, भारतीय पंचांग, विक्रम सम्वत्, मास, ग्रह स्थिति, योग, भद्रा स्थिति, चंद्र स्थिति, पर्व, शुभाशुभ मुहूर्त, घटी, नक्षत्र, जयंती, व्रत, त्यौहार, चौघड़िया, सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण, आकाशस्थि, ग्रह, नक्षत्र, ग्रहों का परिभ्रमण आदि की जानकारी समाहित है।

विक्रमादित्य व तात्कालिक राजवंशों के मुद्रा साक्ष

विजय कुमार परिहार

मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद स्थानिक एक जानपदिक एवं अनुवांशिक राज्य स्थापित हुए। इन राज्यों ने अपने सिक्के, मुख्यतः ताँबे के चलाये थे। उनके चाँदी के भी सिक्के बहुत ही कम हैं। आहत–मुद्राओं की पद्धति पर बने चौकोर अथवा आयताकार डेढ़ इंच लम्बे और पौन इंच चौड़े ताँबे के सिक्के बिहार में अनेक स्थलों से मिले हैं। उन पर एक ओर पाँच और दूसरी ओर चार लांछन है। पाँच चिह्नों वाला समूह मौर्यकालीन चाँदी की आहत मुद्राओं के लांछन–समूह से काफी समानता रखता है, किन्तु बनावट में उनसे भिन्न है। इन सिक्कों को ई.पू. 184 में मौर्य–सिंहासन अपहृत करने वाले पुष्यमित्र शुंग ने प्रचलित किया होगा ऐसी धारणा है। पुष्यमित्र शुंग के उत्तराधिकारी जब मगध त्यागकर विदिशा चले गए तो वहाँ भी उन्होंने अपनी आहत मुद्राओं की तकनीक में बने सिक्के चलाये। इन सिक्कों पर एक लांछन का स्थान आलेख ने लिया है। उनमें नारायण मिश्र, भूमिदत्त, हस्तिदेव, भानुमित्र, दामभद्र, भगिला, कविभूति नाम है। ये सिक्के सम्भवतः परवर्ती शुंगशासकों और उनके उत्तराधिकारी कण्वों के हैं। सिक्के बनाने के लिए आहत निर्माण–प्रणाली के स्थान नवीन प्रणालियाँ अपनायी गयी तथापि लांछनों का प्रयोग पूर्ववत बना रहा।

अधिकार की अभिव्यक्ति के लिए लेखों का एक नया तत्व भी इनके साथ जुट गया। अर्थात् इन सिक्कों पर लेखों का प्रयोग होने लगा। इस काल के कुछ अभिलेखरहित सिक्के उत्तर–पश्चिम में गांधार से, गंगा काँठे में कौशाम्बी से और मध्य भारत में एरण और उज्जयिनी से मिले है। उज्जयिनी के सिक्के असंख्य भांतों के है। अधिकांश पर एक ओर उज्जयिनी चिह्न कहा जाने वाला प्रतीक है। कुछ सिक्कों पर उज्जयिनी चिह्न के स्थान पर मेढ़क देखने में आता है। अभिलेखयुक्त सिक्के अपने लेखों के अनुसार तीन प्रकार के हैं– (1) नागर, (2) जनपदीय और (3) वैयक्तिक। नागर सिक्कों पर नगर–नाम अंकित है, कदाचित् इन्हें नगर–राज्यों ने प्रचलित किया था। सिक्कों से ज्ञात इस काल के अन्य नगर, राज्य थे– गंगा कांठे में वाराणसी, श्रावस्ती और कौशाम्बी, पूर्वी राजस्थान में उद्देहिक और सुदवास, मध्यभारत में उज्जयिनी, एरकिण्य, विदिशा, महिष्मती, कुरर, भगिला और त्रिपुरी, दक्षिण में नगर। ये सभी नगर, राज्य अल्प जीवी थे। इनमें से अधिकांश के पीछे चलकर राजतंत्र का रूप धारण कर लिया। इन नगर, राज्यों में से कुछ के, विशेषतः राजस्थान के सिक्कों पर स्थान और शासक दोनों के नाम मिलते हैं। इन सिक्कों का महत्व इस बात में है कि इस तथ्य को उद्भासित करता है कि उस नगर, राज्य में शासन शक्ति नगर देवी में अंतर्भूत थी। पंजाब के जनपदीय राज्य औदुम्बर, कुणिन्द ओर यौध्येय, जो नगर, राज्यों के प्रायः समकालिक थे, इसी प्रकार के थे। उन्होंने अपने इष्ट देवो महादेव (शिव), चत्रेश्वर (शिव) और ब्रह्मण्य (कार्तिकेय) के नाम पर सिक्के प्रचलित किये थे। इस प्रकार ई.पू. दूसरी शती में सिक्के प्रचलित करने वाले राज्य आग्रेय, राजन्य, शिवि, त्रिगत और यौधेय ज्ञात होते हैं। इनमें यौधेय का अस्तित्व तो गुप्त साम्राज्य के उदय तक रहा। ई.पू. दूसरी शती के जनराज्यों के अपने को अपने सिक्कों पर जनपद नाम से अभिहित किया है। उनका नाम सिक्कों पर ब्राह्मी लिपि में लिखा मिलता है। कुछ जनपदों ने अपने नाम के साथ अपने स्थान का भी उल्लेख किया है। परवर्ती जनराज्यों में अनेक राज्यों के सिक्के ऐसे हैं, जिन पर जन नाम के साथ–साथ राजा अथवा महाराजा उपाधि से युक्त वैयक्तिक नामों का उल्लेख हुआ है। प्रत्येक जन राज्य के सिक्कों का अपना–अपना भार–मान था और कइयों ने खरीज के रूप में एक से अधिक मूल्य के सिक्के चलाये थे। कुछ जनराज्यों के सिक्के चाँदी के भी थे, किंतु वे अब दुर्लभ है। चाँदी के सिक्के यवन राजाओं के हेमी दुरूम सिक्कों के भार–मान के है और उनकी बनावट भी उनके सिक्कें से मिलती–जुलती हुई है। यौधेयों के परवर्तीकालीन सिक्के सुडौल बनावट के है और उन पर कुषाण प्रभाव परिलक्षित होता है। इस काल में गंगा–यमुना के कांठे में राज–तंत्र का विकास हुआ। वहाँ उनके सिक्कों से चार बड़े राज्यों के होने का पता लगता है। इनमें एक तो शूरसेन था, जिसकी राजधानी मथुरा थी, दूसरा पांचाल था, उसकी राजधानी अहिच्छत्र (रामनगर, जिला बरेली) थी, तीसरा

वत्स था, उसकी राजधानी कौशाम्बी थी और चौथा कोसल था उसकी राजधानी या तो श्रावस्ती (सहेत–महेत, जिला गोंड़ा) रही होगी या फिर साकेत (अयोध्या, जिला फैजाबाद)। शूरसेन (मथुरा) के राज्य पर पहले शक क्षत्रपों ने अधिकार किया। बाद में उस पर कुषाणों का आधिपत्य हुआ। विदेशी राजाओं में रजुबुल पहला राजा था। पहले वह पंजाब के कुछ भाग पर शासन करता था। उसके अद्यतन सिक्के हेमीद्रख्य भारमान के हैं और उनकी चाँदी में काफी मात्रा में सीसे की मिलावट है। देखने में वे वाख्त्री–भारतीय नरेश (प्रथम एवं द्वितीय) के उत्तरकालीन सिक्कों से बहुत कुछ मिलते हुए हैं। इन पर एक ओर राजा को दक्षिणाभिमुख छवि और भ्रष्ट यावनी भाषा में नाम के साथ बेसीलियास सोटोरास विरुद हैं। रजुबुल के बाद उसके दो सोडास और तोरणदास शासक बने, पश्चात कुछ काल तक हगान और हगमश ने संयुक्त रूप से शासन किया। फिर हगमश अकेला शासक रहा। उनके बाद शिवदत्त और शिवघोष नामक दो अन्य शासक हुए। रजुबुल और सोडास के सिक्कों पर उन्हें महाक्षत्रप कहा गया है।

पांचाल के सिक्कों में अविच्छिन्न एकरूपता देखने में आती हैं और उनसे वहाँ के इक्कीस राजाओं के नाम ज्ञात होते हैं। वे हैं– रुद्रगुप्त, जयगुप्त, दामगुप्त, वंगपाल, विश्वपाल, यज्ञपाल, वसुसेन, सूर्यमित्र, विष्णुमित्र, ध्रुवमित्र, इन्द्रमित्र, फाल्गुनीमित्र, बृहस्पतिमित्र, अणुमित्र, वरुणमित्र और प्रजापति मित्र। सूर्यमित्र और भानुमित्र के सिक्कों पर एक जगती पीठ पर सूर्य का प्रतीक रखा है। इसी प्रकार अग्निमित्र के सिक्के पर जो मानव आकृति है, अच्युत नाम शासक के सिक्के भी मिले हैं, जिसका उल्लेख प्रयाग–प्रशस्ति में हुआ है और जिसका समुद्रगुप्त ने उन्मूलन किया था। वत्स के अठारह राजाओं के सिक्के मिले हैं वे हैं– अश्वघोष, पर्वत, इन्द्रदेव, सुदेव, मित्र, राघमित्र, अग्निमित्र, ज्येष्ठमित्र, बृहस्पतिमित्र, सुरमित्र, वरुणमित्र, पाठेमित्र, सूर्यमित्र, प्रजापतिमित्र, सत्यमित्र, राजमित्र, रजनीमित्र और देवमित्र। इन राजाओं के पश्चात् वत्स पर एक नये वंश का अधिकार ज्ञात होता है। कोसल नरेशों ने आरम्भ में ढालित सिक्के चलाये थे। उन सिक्कों पर मूलदेव, वायुदेव, विशाखदेव और घनदेव के नाम हैं। ढालित सिक्कों की एक अन्य श्रृंखला नरदत्त, ज्येष्ठदत्त और शिवदत्त के सिक्कों की भी है। मध्यप्रदेश के विदिशा एरण के ताम्र आहत–मुद्राओं की, जो कदाचित् शुंग और कण्व राजाओं के हैं, इनकी चर्चा पहले की जा चुकी है। उनके बाद सात ओर सातकर्णी नामक दो सातवाहन राजाओं के अभिलेखयुक्त सिक्के मिलते हैं। सातवाहनों के पश्चात् इस प्रदेश में पश्चिमी क्षत्रप आये। उनका परिचय उनके अपने सिक्कों से ही मिलता है। वे 350 ई. तक शासन करते रहे। उज्जयिनी से मिलने वाले अभिलेखहीन टंकित सिक्कों की लम्बी श्रृंखला मिली है। कुछ ऐसे सिक्के प्रकाश में आये हैं, जिन पर हमुगम, वल्मक, महू, सौम आदि नाम पढ़े गये हैं। ये नाम शक सरीखे लगते हैं और जैन साहित्य में उल्लेखित उस अनुश्रुति का समर्थन करते प्रतीत होते हैं, जिसमें ई.पू. पहली शती में शक आक्रमण की बात कही गयी है। इन सिक्कों पर एक ओर नाम और दूसरी ओर उज्जयिनी के सिक्कों से गृहित प्रतीक है। महाकोसल वाले क्षेत्र में त्रिपुरी और महनार से मित्र, माघ, बाधि और सेन वंश के सिक्के प्रकाश में आये हैं। बोधि और सेन वंश के सिक्के सीसे के हैं। पद्मावती कदाचित् इस क्षेत्र में एक स्वतंत्र राज्य था। उस प्रदेश में मिले सिक्कों से विशाखदेव, महत, सलवसेन, अमित सेन और शिवगुप्त के नाम ज्ञात हुए हैं। वे लोग कदाचित् ईसा पूर्व और ईसा की आरंभिक शताब्दियों में वहाँ के शासक थे। दूसरी शती ई. में किसी समय वहाँ नागवंश का उदय हुआ, जो चौथी शती ई बैंक शासन करता रहा। सिक्कों में इस वंश के बारह राजाओं के नाम ज्ञात हुए हैं। वे हैं – वृष, भीम, स्कन्छ, बसु, बृहस्पति, विभु, रवि, भव, प्रभाकर, देव, व्याघ्र और गणपति। इन सबके सिक्के आकार में असाधारण रूप में छोटे हैं और वजन में वे 8,18 अथवा 36 ग्रेन हैं। इन सिक्कों पर एक ओर राज्य का नाम ओर दूसरी ओर कोई प्रतीक, पशु अथवा पक्षी का अंकन है। इन पर सर्वाधिक ककुत्ययुक्त वृषभी देखने में आता है। पक्षियों में मयूर की प्रमुखता है।

पंजाब में अम्बाला और होशियारपुर जिलों से मित्र नामक शासकों के सिक्के प्राप्त होते हैं। वहाँ भी एक राजवंश का शासन ज्ञात होता है। इन शासकों के नाम हैं– हरिदत्त, शिवदत्त, शिवपालि, विजयभूमि। शिशुपाल गढ़ के उत्खनन में सोने का एक सिक्का मिला था, जिसे कुण्डा लगाकर आभूषण का रूप दिया गया है। इसके एक ओर कुषाण सिक्के की अनुकृति है अर्थात् टोप पहने राजा हाथ में भाला लिए खड़ा आहूत दे रहा है। दूसरी ओर रोम सम्राटों के सिक्कों के अनुकरण पर मुण्ड है। उस पर रोमन अथवा यूनानी लिपि में एक अस्पष्ट लेख के अवशेष हैं। इसे तीसरे शती ई. का अनुमान किया जा सकता है, किंतु वह किसी रूप में सिक्का रहा होगा, यह संदिग्ध है। वस्तुस्थिति जो भी हो, इसी क्रम में ताँबे के सिक्के मिलते हैं, जो पुरी कुषाण अथवा उडिया कुषाण के नाम से पुकारे जाते हैं, किंतु ये सिक्के पुरी अथवा उडीसा तक ही सीमित नहीं हैं, वरन् उससे सटे बिहार के भू–भाग में भी मिलते हैं। मगध साम्राज्य के विस्तार से पूर्व दक्षिण भारत में आंध्र और अश्मक नामक जनपदों (राज्यों) ने चाँदी की आहत मुद्राएँ प्रचलित की थीं। मगध साम्राज्य के प्रभुत्वकाल के इस भू–भाग में मगध की आहत मुद्राओं का प्रचलन था। यह बात वहाँ आहत मुद्राओं से जिखातों (दफीनों) के बड़ी संख्या में मिलने से प्रकट होता है। मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् ही पाण्ड्य प्रदेश में कुछ स्थानीय आहत मुद्राएँ बनीं। कदाचित् वे मौर्यकालीन अर्ध और पाद कार्षापण (पण) भारमान के बराबर होंगे। मौर्यों के पतन के पश्चात् अथवा उनके शासनकाल में ही समग्र दक्षिण भारत, मुख्यतः पाण्ड्य चोल और आंध्र क्षेत्र में अभिलेखविहीन ढालित एवं टंकित सिक्के प्रचलित थे। मध्यप्रदेश से उपलब्ध सिक्कों से प्रकट होता है कि उज्जयिनी से मालव नाम गणस्य जय अक्षरांकित अनेक सिक्के प्राप्त हुए हैं।

उज्जैन का अलौकिक सिंहस्थ

मोक्षदायिनी उज्जयिनी का सिंहस्थ महापर्व से अत्यन्त घनिष्ठ संबंध है और उज्जयिनी के कुम्भ पर्व का अन्य पर्वों से भी अधिक महत्व का स्थान प्राप्त है क्योंकि इसमें सिंहस्थ महापर्व भी समाहित है। हरिद्वार, प्रयाग, नासिक, उज्जैन के कुम्भों में सिंहस्थ इसलिए अलौकिक है क्योंकि यह अमृत जल का मूल स्थान है। अमृतमंथन के बाद अमृत वितरण अवन्ती के महाकाल वन में ही हुआ, इसीलिए उज्जैन का नाम अमरावती हुआ और यहाँ अमृतपान कर देवता अमर हुए। समुद्रमंथन के बाद देवासुर संग्राम की शान्ति ऋषि नारद के हस्तक्षेप से यहीं संभव हुई। यह बात मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने विक्रमोत्सव 2025 के शुभारंभ अवसर पर सिंहस्थ 2028 की अवधारणा को लोकार्पित करते हुए कही।

मुख्यमंत्री ने कहा कि उज्जैन में ही भगवान विष्णु ने मोहिनी अवतार वैशाख शुक्ल एकादशी को धारण किया और महामोहिनी ने अमृत वितरण किया। इसलिए यह अमृत भूमि है क्योंकि यहाँ अमृतपान हुआ। उज्जैन में ही श्रीविष्णु के चक्र से राहु को विभक्त कर राहु–केतु का विभाजन हुआ और तभी से उनकी नव ग्रहों में गणना की जाने लगी।

समुद्रमंथन से प्रकट हुई महालक्ष्मी उज्जैन के महाकाल वन में रहने लगीं तदन्तर समुद्रमंथन से उत्पन्न कौस्तुभ मणि, पारिजात वृक्ष, वारुणी मदिरा, धन्वन्तरि, चन्द्रमा, कामधेनु, ऐरावत हाथी, उच्चौःश्रवा अश्व, अमृत कलश, अप्सरा रम्भा, शारंग धनुष, पाञ्चजन्य शंख, महापद्म निधि, कालकूट विष ये चौदह रत्न उत्पन्न हुए। इन सबको लेकर देवता और दैत्य महाकाल वन आये। यहीं महाकाल वन में देवताओं को रत्नों की भेंट मिली, जिसके कारण वे रत्नभोगी कहलाये।

मुख्यमंत्री ने बताया कि महामोहिनी ने कौस्तुभ मणि, लक्ष्मी, शारंग धनुष व पाञ्चजन्य शंख भगवान विष्णु को अर्पित किये। उच्चौःश्रवा अश्व सूर्य को तथा गज श्रेष्ठ ऐरावत इंद्र को समर्पित किया। देवताओं को अमृत और शिवजी को चन्द्रमा अर्पित हुए। वृक्षों में श्रेष्ठ पारिजात तथा अप्सरा रम्भा को इंद्र के क्रीड़ाकानन नंदनवन में भेजा गया। देवताओं को इस कारण अपना खोया हुआ स्थान पुनः प्राप्त हुआ। कामधेनु को यज्ञ सिद्धि के लिए ऋषियों के आधीन किया गया।

महापद्म नाम की निधि कुबेर के भवन में गई और कालकूट विष को महादेव ने धारण किया तथा नीलकंठ कहलाये। जहाँ रत्नों का बँटवारा हुआ उस रत्न कुंड में स्नान करके जो भगवान नीलकंठ का दर्शन करता है वह सभी पापों से मुक्त होकर सब रत्नों का भोगी होता है और अंत में शिवलोक को जाता है। चूँकि अवंतिकापुरी में आकर सभी देवता रत्नों के भोगी हुए तथा भगवती पद्मा (महालक्ष्मी) निश्चल रूप से यहाँ निवास करती हैं इसलिए ब्रह्मा और विष्णु आदि देवगणों ने उज्जैन का नाम पद्मावती रखा और आशीर्वाद दिया कि जो मानव इस तीर्थ में स्नान, दान, पूजन और तर्पण करेगा उसके शरीर में किंचित भी पाप नहीं रह जाएगा। उसे दरिद्रता और दुर्गति प्राप्त नहीं होंगे।

डॉ. यादव ने बताया कि सिंहस्थ महापर्व के आयोजन की जानकारी महाभारत काल के पूर्व से मिलती है। महर्षि सान्दीपनि काशी से सिंहस्थ महापर्व के अवसर पर अवन्ती आये। तत्समय भीषण अनावृष्टि के कारण श्रद्धालु परेशान थे और सिंहस्थ भी बाधित हो रहा था। महर्षि सान्दीपनि ने सिंहस्थ की बाधाओं को हरने और श्रद्धालुजनों के कष्टों के निवारण के लिए महाकाल की घोर तपस्या की। देवी पार्वती के अनुरोध पर महादेव महाकाल लिंग से प्रकट हुए और महर्षि सान्दीपनि को दुर्भिक्ष दूर करने और जनता को सुखी करने का वरदान दिया कि अब इस अवन्तिका के दुर्भिक्ष का कष्ट कभी नहीं रहेगा तथा यह देश मा–लव के नाम से प्रसिद्ध होगा। साथ ही उन्होंने महर्षि सान्दीपनि को निर्देश दिये कि अब आप भी मेरी अर्चना करते हुए यहाँ बस जाये और विद्यादान द्वारा भावी पीढ़ी को ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा देकर विश्व कल्यावण के लिए अग्रसर बनाये। निकट भविष्य में आपके सुयोग्य शिष्य श्रीकृष्ण और बलराम आपके मृत पुत्र को यम से लाकर सौंप देंगे। लोक आख्यान अनुसार तभी से महर्षि सान्दीपनि के प्रयास से मालवा में सुभिक्ष हो गया और यहाँ के निवासी वैभवशाली हो गये। इसीलिए मान्यता है कि दृ सर्वे देशा भूषिता मालवीयैस्सकर्वे विज्ञा भूषिता मालवीयै। सर्वे धर्मा आश्रिता मालवीयैरू सर्वा विद्या आश्रिता मालवीयै।।

उज्जैन में 26 फरवरी 2025 को आयोजित विक्रमोत्सव 2025 के शुभारंभ अवसर पर केन्द्रीय संस्कृति मंत्री गजेन्द्र सिंह शेखावत एवं माननीय मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव द्वारा अलौकिक सिंहस्थ पुस्तक का लोकार्पण किया गया।

इस प्रकार उज्जैन में सिंहस्थ के आयोजन की जानकारी कोई सवा पाँच हजार वर्ष पूर्व होने की हमें मिलती है और उसके बाद समय–समय पर सिंहस्थ महापर्व उज्जैन में एक निरन्तर बना हुआ है। मणिपुरचक्र उज्जयिनी का प्रागैतिहासिक, वैदिक, पौराणिक, रामायणकालीन, महाभारतकालीन, जैन, बौद्ध, मौर्य, शुंग, शकों, हूणों, यवनों, आभीरों, गुप्तों, मौखरियों, सातवाहनों, गुर्जरों, प्रतिहारों, परमारों, खिलजियों, मुगलों, मरहट्टों के दुरंत दौरों, फिरंगियों का दौर रहा हो लेकिन सिंहस्थ के माध्यम से धर्म, दर्शन, इतिहास संहिता, कला, वेद, वेदांग, योग, आयुर्वेद, ज्योतिष, खगोल विज्ञान का उन्मेष यहाँ सदैव ही रहा है।

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि वर्ष 2028 में उज्जैन में आयोजित होने वाले अलौकिक सिंहस्थ के माध्यम से हमारा प्रयास होगा कि समस्त तीर्थों के भ्रमण की परंपराओं, अनन्त साधनाओं, अखंड साधना पीठों के माध्यम से लोक कल्याण का एक नैष्ठिक निःसंग प्रयास किया जा सके।

सिंहस्थ कुंभ भारत में आयोजित होने वाले सबसे बड़े आध्यात्मिक और सांस्कृतिक आयोजनों में से एक है। यह मेला हर बरह वर्षों में मध्यप्रदेश के उज्जैन में क्षिप्रा नदी के तट पर आयोजित होता है। महाराजा विक्रमादित्य शोधपीठ द्वारा प्रकाशित पुस्तक अलौकिक सिंहस्थ इसी भव्य आयोजन पर केंद्रित है और इसमें सिंहस्थ मेले के ऐतिहासिक, धार्मिक और सामाजिक पहलुओं को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक में प्रामाणिक स्रोतों और ऐतिहासिक तथ्यों का समावेश किया गया है। सरल और प्रवाहपूर्ण भाषा में लिखी गई है, जिससे पाठक इसके साथ सहज रूप से जुड़ सकते हैं। इसमें चित्रों, नक्शों और सांख्यिकीय विवरणों के माध्यम से सिंहस्थ मेले को अधिक स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है। सिंहस्थ पुस्तक उन पाठकों के लिए अत्यंत उपयोगी है जो इस भव्य मेले के ऐतिहासिक, धार्मिक और सामाजिक पक्षों को गहराई से समझना चाहते हैं। यह न केवल आध्यात्म और संस्कृति में रुचि रखने वालों के लिए बल्कि शोधकर्ताओं और इतिहासकारों के लिए भी महत्वपूर्ण ग्रंथ साबित हो सकती है। सिंहस्थ कुंभ में स्नान करने से व्यक्ति के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है। मान्यता है कि इस अवसर पर पवित्र नदियों में देवताओं और ऋषियों की दिव्य उपस्थिति होती है। सिंहस्थ का आयोजन तब होता है जब बृहस्पति सिंह राशि में प्रवेश करता है, जिससे इस अवधि को अत्यधिक शुभ माना जाता है। सिंहस्थ के दौरान विभिन्न अखाड़ों और संप्रदायों के संत एकत्रित होते हैं, जिससे श्रद्धालुओं को आध्यात्मिक ज्ञान और सत्संग का लाभ मिलता है। संतों की वाणी से धर्म, योग, वेदांत और अन्य शास्त्रों की गूढ़ बातें समझने को मिलती हैं। सिंहस्थ कुंभ केवल बाहरी स्नान का ही नहीं, बल्कि आंतरिक शुद्धि का भी प्रतीक है। यहाँ आने वाले श्रद्धालु सांसारिक मोह–माया से दूर होकर आत्मकल्याण और आत्मचिंतन का मार्ग अपनाते हैं। सिंहस्थ कुंभ महापर्व केवल एक धार्मिक मेला नहीं, बल्कि आध्यात्मिक जागरण, आत्मशुद्धि और मोक्ष की प्राप्ति का महासंगम है।

महाराजा विक्रमादित्य शोध पीठ, स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग, मध्यप्रदेश शासन के लिए बिड़ला भवन, देवास रोड, उज्जैन-456010 से प्रसारित. सम्पादक : श्रीराम तिवारी, समन्वयक : राजेश्वर त्रिवेदी.

आलेख सेवा निःशुल्क वितरण के लिए. फोन: 0734-2521499, 0755-2660407 Email:mvspujjain@gmail.com, vikramadityashodhpeeth@gmail.com